| विषय | हिन्दी |
|---|---|
| प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक | P3 : आधुनिक काव्य-2 |
| इकाई सं. एवं शीर्षक | M6 : हिन्दी आलोचना में नागार्जुन का मूल्यांकन |
| इकाई टैग | HND_P3_M6 |
| प्रधान निरीक्षक | प्रो. रामबक्ष जाट |
| प्रश्नपत्र-संयोजक | डॉ. ओमप्रकाश सिंह |
| इकाई-लेखक | डॉ. विभावरी |
| इकाई-समीक्षक | प्रो. महेन्द्रपाल शर्मा |
| भाषा-सम्पादक | प्रो. देवशंकर नवीन |

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. आलोचकों की दृष्टि में नागार्जुन
   3.1 काव्य -वस्तु के स्तर पर
   3.2 भाषा के स्तर पर
4. निष्कर्ष

A Gateway to All Post Graduate Courses

## 1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरान्त आप-

- आलोचकों की दृष्टि में नागार्जुन के मूल्यांकन की जानकारी हासिल करेंगे।
- विचारधारा के स्तर पर नागार्जुन की कविताओं के मूल्यांकन से परिचित हो सकेंगे।
- नागार्जुन के भाषा-सम्बन्धी स्वरूप की जानकारी ले सकेंगे।

## 2. प्रस्तावना

नागार्जुन की कविताएँ हिन्दी साहित्य के प्रगतिवादी दौर की महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं। उनकी कविताओं की संवेदना में उनके संघर्षशील जीवन, घुमन्तू व्यक्तित्त्व और मार्क्सवादी वैचारिक रुझान का अद्‌भुत समन्वय है। जहा यायावरी जीवनानुभव उनकी कविताओं के फलक को विस्तार देते हैं, तो दूसरी तरफ उनकी वामपन्थी वैचारिकता की धार इन कविताओं को पुख्ता आधार मुहैया कराती है। यह उनकी कवि-दृष्टि की प्रखरता ही है, जो मादा सुअर (पैने दाँतों वाली) से लेकर बादलों के सौन्दर्य (बादल को घिरते देखा है जैसी कई ) तक में अपनी कविताई के उपकरण ढूँढ लेती है। दरअसल उनकी कविताएँ जीवन की विडम्बनात्मक सच्चाइयों और उसके सहज-सरल-निर्बाध सौन्दर्य में समान रूप से दखल रखने वाली कविताएँ हैं। 'फॉर्म' और 'कण्टेंट' दोनों के लिहाज से नागार्जुन की कविताओं की एक विशिष्ट पहचान है। यह पहचान उनकी कविताओं में जनसाधारण की चिन्ता अथवा जनपक्षधरता के रूप में उभरती है। उनकी कविताओं में मानव जीवन के विविध रंग हैं; जीवन के वैयक्तिक से लेकर सामाजिक-राजनीतिक आयामों तक इन कविताओं की पहुँच है। इस मायने में नागार्जुन वास्तविक लोकतन्त्र के कवि कहे जा सकते हैं, क्योंकि समाज के ज़्यादातर आयामों को उन्होंने अपनी कविताओं में समेटा है।

## 3. आलोचकों की दृष्टि में नागार्जुन

नागार्जुन के कवि व्यक्तित्व का आकलन करते हुए आलोचकों की मिली-जुली प्रतिक्रियाएँ दिखती हैं। कुछ आलोचकों को उनकी कविताओं में नारों के स्वर सुनाई देते हैं, तो कुछ के लिए वे भिन्न किस्म के कला-बोध के कवि हैं। आलोचकों ने अक्सर उनकी तुलना कबीर और निराला से की है, लेकिन अपनी सम्पूर्णता में नागार्जुन की तुलना केवल नागार्जुन से ही हो सकती है, किसी अन्य से नहीं।

चूँकि नागार्जुन की कविताएँ प्रगतिवाद की उपज हैं जिसका आधार मार्क्सवादी साहित्य चिन्तन है, इसलिए उनकी कविताओं के मूल में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की विशेषताएँ सहज ही देखी जा सकती हैं। नागार्जुन के व्यक्तित्व और कृतित्व पर उनके बौद्ध वैचारिक रुझान का भी असर दिखता है। प्रेम, राजनीति, प्रकृति जैसे विषयों से लेकर कटहल, नेवला और खुरदरे पैर तक उनकी कविता के विषय हैं। इस दृष्टि से देखने पर सहज ही उनके काव्य संसार की व्यापकता का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। उनकी कविता की भाषा और शिल्प कविता में कथ्य के पूरक के तौर पर आते हैं। उनकी कविताओं को पढ़ते हुए सामाजिक यथार्थ के उनके गहरे भाव-बोध को सहज ही महसूस किया जा सकता है। ग्रामीण जीवन के अनुभव जनता की पीड़ा से मिलकर उनकी कविताओं को सार्थकता देते हैं। एक साहित्यकार से समाज की यह अपेक्षा होती है। उनकी कविता के विद्रोही तेवर और व्यंग्यात्मक धार को उनकी विशिष्टता के रूप में देखा जा सकता है।

"श्री भगवत रावत ने *तुमने कहा था* संग्रह की समीक्षा करते हुए नागार्जुन के कवि व्यक्तित्व के दो पक्ष निरुपित किए। एक में 'आज के आदमी की दम तोड़ती ज़िन्दगी की तकलीफों और संघर्षों को पूरी संवेदना के साथ' चित्रित किया गया है। और दूसरे में 'अन्याय, दमन और शोषण से उपजी कटुता व्यक्त हुई है।' अधिक सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए तो 'एक छवि और

बनती है नागार्जुन की कविता की, जहाँ वह प्रकृति की सुन्दरता अथवा महान व्यक्तियों के गुणगान करती दिखाई देती है।" (पूर्वग्रह, 39-40 )

### 3.1. काव्य -वस्तु के स्तर पर

नागार्जुन की वैचारिकता के लिहाज़ से देखें, तो काव्य-वस्तु अथवा कविता की अन्तर्वस्तु का महत्व बढ़ जाता है। उनकी कविताओं को पढ़ते हुए बार-बार महसूस होता है कि नागार्जुन के यहाँ 'कला जीवन के लिए' है! यही कारण है कि उनकी कविताएँ जीवन से सीधा संवाद स्थापित करती हैं। जीवन के हर पक्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं। मैनेजर पाण्डेय उनके विषय में लिखते हैं- "नागार्जुन ने हिन्दी में कविता की भूमि का विस्तार किया है। उन्होंने अनेक विषयों पर कविताएँ लिखीं जिन पर पहले हिन्दी में कविता नहीं लिखी जाती थी। नागार्जुन कविता के लिए वर्जित प्रदेश में कविता को ले गए हैं। उनकी कविता निराला की बनाई हुई काव्य-भूमि का विस्तार भी करती है और उसे अधिक व्यापक बनाती है। नागार्जुन की कविता में विभिन्न सामाजिक वर्गों, समुदायों और जातियों से लेकर जीव-जन्तुओं तक के लिए जगह है। वे अपनी कविता की दुनिया रचते समय बाहर की दुनिया की विविधता और व्यापकता को बराबर ध्यान में रखते हैं।" (मैनेजर पाण्डेय, *संकलित निबंध*, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, पृष्ठ 164-165)

नागार्जुन के रचनाकार व्यक्तित्व का बेहद महत्त्वपूर्ण पक्ष है उनकी प्रतिबद्धता। अपनी कविता 'प्रतिबद्ध हूँ' में उन्होंने इस प्रतिबद्धता, सम्बद्धता और आबद्धता को अभिव्यक्त किया है। अपनी पूरी संवेदना में यह कविता उनके कवि व्यक्तित्व और रचना प्रक्रिया के भीतर की द्वन्द्वात्मकता का आख्यान है। कविता में प्रतिबद्धता जहाँ उनकी वैचारिकता पर बात करती है, वहीं सम्बद्धता उनके व्यक्तित्त्व के बाहरी-भीतरी पक्षों के सृजन के लिए ज़िम्मेदार कारकों से सम्बंधित है। जबकि आबद्धता उनकी भावनाओं के बेहद निजी कारकों से जुड़ी हुई है। इस कविता के द्वारा नागार्जुन की कविताओं के कथ्य को समझने में मदद मिल सकती है। एक कवि का मानस जिस द्वन्द्व से गुज़रकर आकार लेता है, और उसकी चेतना की निर्मिति के लिए जो कारक ज़िम्मेदार होते हैं, कविता उन सभी पक्षों पर बात करती है। इस कविता का सन्दर्भ लिया जा सकता है-

*प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ प्रतिबद्ध हूँ-*
*बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त –*
*संकुचित 'स्व' की आपाधापी के निषेधार्थ ...*
*अविवेकी भीड़ की 'भेड़िया धसान' के खिलाफ...*
*अंध-बधिर 'व्यक्तियों' को सही राह बतलाने के लिए...*
*अपने आप को भी 'व्यामोह' से बारम्बार उबारने की खातिर...*
*प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ शतधा प्रतिबद्ध हूँ!*

(*नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ,* पृष्ठ 15)

नागार्जुन के काव्य-वस्तु में उनकी प्रतिबद्धता इसलिए भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि उनकी वामपन्थी चेतना इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण उपकरण के तौर पर काम करती है। बाद के दिनों में उनका इस वैचारिकता से विचलन भी हुआ।अक्सर उनकी राजनीतिक पक्षधरता और विचलनों को आलोचना के घेरे में खड़ा होना पड़ा। गिरिधर राठी लिखते हैं, "कोई भी ऐसा व्यक्ति शायद ही हो आज, जिसके अपने राजनीतिक विचार हों और जिसे नागार्जुन की 'राजनीतिक' कविताओं में से कुछ, किसी न किसी दौर में असहनीय नहीं लगी हों। सनातनी मैथिल घर, श्रीलंका में बौद्ध हीनयान,

मार्क्सवादी दलों के सभी अवतार, गुट और व्यक्ति, लोकतन्त्र के कई रूपाकार – इनसे मिलती, टूटती और फिर अपने स्वरूप को हासिल करती हुई, अनेक नावों की यात्रा नागार्जुन को भारतीय जीवन का शायद एक सबसे अनुभव समृद्ध व्यक्तित्व देती है।" (*अपने समय में कवि का हस्तक्षेप*, जनसत्ता, 22 जून 1986)

स्पष्ट है कि इन अनुभवों ने नागार्जुन की चेतना को स्पष्ट बनाया है, बेबाक बनाया है। जब नागार्जुन लिखते हैं कि 'जनकवि हूँ मैं साफ़ कहूँगा, क्यों हकलाऊँ!' तो उनका यह खरापन अपने प्रखर रूप में सामने आता है। नागार्जुन की आलोचना-दृष्टि, 'जनता के प्रति जवाबदेही' के साथ मिलकर उनकी अपनी सोच और वैचारिकता को भी सवालों के घेरे में खड़ा करती है। फिर चाहे वह उनका ब्राह्मण कुल में पैदा होकर 'ब्राह्मणवाद' का विरोध रहा हो अथवा बौद्ध दीक्षा लेने के बाद उसकी सीमाओं को उजागर करती कविताओं का रचा जाना। अपनी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति में वे बेबाक हैं, लेकिन यह बेबाकी अनिवार्य तौर पर उनके ज़िम्मेदार कवि व्यक्तित्व द्वारा संचालित है। अजय तिवारी इस सन्दर्भ में कहते हैं, "बौद्ध संघों के अपने अनुभव-ज्ञान से सम्पन्न होकर उन्होंने 'भिक्षुणी' की कल्पना की है। वह मजबूरियों के कारण बचपन में ही बुद्ध की शरण में आ गई। युवावस्था के साथ उसकी नारी-सुलभ आकांक्षाएँ जागने लगीं। वह बुद्ध के प्रति आकृष्ट होती है। हीनयान-महायान समझ चुकने के बाद अब वह मानव-सम्बन्धों का सहजयान जानना चाहती है:

*भगवान अमिताभ, सहचर मैं चाहती*
*चाहती अवलम्ब, चाहती सहारा*
*देकर तिलांजलि मिथ्या संकोच को*
*हृदय की बात लो, कहती हूँ आज मैं-*
*कोई एक होता*
*कि जिसको*
*अपना मैं समझती...*
*भूख मातृत्व की मेरी मिटा देता;*
*स्त्रीत्व का सुफल पाकर अनायास*
*धन्य मैं होती!* *(युगधारा)*

स्वभावतः बुद्ध के प्रति उसके आकर्षण का कारण है मातृत्व की भूख! यह उसकी मानवीय आकांक्षा है। संघों के नियम इस मानवीय आकांक्षा पर पाबन्दियाँ लगाते हैं। नागार्जुन ने इन पाबन्दियों के मुकाबले में मनुष्य की सहज अभिलाषाओं को रख दिया है और इसके लिए बुद्ध के जीवन में एक कल्पित स्थिति को माध्यम बनाया है।...इससे परिणाम यह निकलता है कि नागार्जुन ने बौद्ध धर्म में दीक्षित होने के बाद, उसके साहित्य और व्यवहार का अध्ययन करने के बाद अपने चिन्तन और अनुभव को समृद्ध किया, लेकिन अपने सहज आलोचनात्मक विवेक को उन्होंने कभी त्यागा नहीं।" (*नागार्जुन की कविता*, पृष्ठ 32)

वामपन्थी चेतना मनुष्य के भौतिक अस्तित्त्व से कला का गहरा रिश्ता मानती है। इस दृष्टि से समाज के यथार्थ का साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान हो जाता है। नागार्जुन की कविताओं का वस्तु-पक्ष अपने समय के इसी यथार्थ की अभिव्यक्ति को सम्भव बनाता है। उनकी कविताओं से गुज़रते हुए बहुत शिद्दत से यह बात महसूस होती है कि उनके समय का यह यथार्थ, सतही यथार्थ नहीं है बल्कि समाज में कहीं गहरे तक पैठा वह यथार्थ है जिसके निहितार्थ एक बड़े जनमानस से जुड़ते हैं।

नागार्जुन की कविताओं की यह विशेषता अनायास ही नहीं है, बल्कि उनकी जीवन-दृष्टि का परिणाम है कि *कल्पना के पुत्र हे भगवान* और *कर दो वमन* जैसी कविताओं में ईश्वर और आस्तिकता भी उनके सवालों के घेरे में आते हैं।

नागार्जुन की कविताओं की अन्तर्वस्तु का एक बेहद महत्वपूर्ण पक्ष उनकी राजनीतिक कविताएँ हैं। यूँ तो उनकी हर कविता का एक राजनीतिक स्वर है बावजूद इसके तत्कालीन राजनीतिक विसंगतियों पर सीधे-सीधे लिखी गई उनकी कविताएँ कई मायनों में महत्त्वपूर्ण हैं।नागार्जुन पर लिखते हुए विश्वनाथ त्रिपाठी कहते हैं कि "कबीरदास की भाँति वह अनेक परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों के समुच्चय हैं। जीवन के प्रति गहरी आसक्ति है। तीव्र सौन्दर्यानुभूति के रचनाकार हैं और इसीलिए गहरी घृणा और तिलमिला देने वाले व्यंग्य के सहज कवि। यह सहजता जटिल अन्तर्वस्तु का रूप है। जटिल अन्तर्वस्तु के बगैर सहजता आ ही नहीं सकती, इसीलिए सहजता मार्मिक और भेदक होती है।"(*gadyakosh.org/gk/साम्राज्यवादी-भूमण्डलीकरण-(विश्वनाथ-त्रिपाठी-/-*नागार्जुन) इस दृष्टि से देखें तो नागार्जुन की *इन्दु जी इन्दु जी, आओ रानी हम ढोएँगे पालकी, शासन की बन्दूक* जैसी अनगिनत कविताएँ, तत्कालीन राजनीतिक जटिलता की सहज अभिव्यक्ति कही जा सकती हैं।

नागार्जुन की कविताओं की एक विलक्षणता यह भी है कि उनकी कविताओं में काव्य जगत के ऐसे अनचीन्हें और दुर्लभ चित्र भी मिलते हैं, जो हिन्दी काव्य जगत में बमुश्किल मिलेंगे। हिन्दी कविता के इतिहास में ऐसे बिम्ब कम ही मिलेंगे, जहाँ बारह थनों वाली मादा सूअर की ममता का वर्णन हो! या फिर एक रिक्शा चालक के खुरदरे पैर कविता का विषय बनें। इस लिहाज़ से देखें तो अपनी ऐसी अनगिनत कविताओं में नागार्जुन, कविता के क्षेत्र में उन विषयों और बिम्बों को साकार करते हैं जो अब तक हाशिये पर थे। और सही मायनों में लोकतन्त्र की चेतना के कवि हो जाते हैं। यहाँ *पैने दाँतों वाली* कविता का प्रसंग लिया जा सकता है-

*धूप में पसारकर लेटी है*
*मोटी तगड़ी अधेड़ मादा सुअर...*
*जमना-किनारे*
*मखमली दूबों पर*
*पूस की गुनगुनी धूप में*
*पसरकर लेटी है*
*यह भी तो मादरे हिंद की बेटी है*
*भरे-पूरे बारह थनों वाली* *(नागार्जुन- प्रतिनिधि कविताएँ,* पृष्ठ 80)

इस कविता की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि *मादा-सुअर* को कविता का केन्द्र बनाते हुए नागार्जुन, 'अभिव्यक्ति के वे सारे खतरे उठाते हैं' जिसकी वकालत मुक्तिबोध की चेतना लगातार करती रही है।

नागार्जुन की कविताओं की एक अन्य विशेषता प्रचलित प्रतीकों का अप्रचलित प्रयोग भी है। मुक्तिबोध और नागार्जुन दोनों के यहाँ क्रमशः *अन्धेरे में* (1964) और *हरिजन गाथा* (1977) में शिशु, क्रान्ति के प्रतीक के तौर पर आता है। लेकिन इन दोनों ही शिशुओं में एक बड़ा फर्क यह है कि मुक्तिबोध का शिशु प्रतीक गांधी द्वारा नायक को दिए गए शिशु से सूरजमुखी के गुच्छे में तब्दील होता हुआ वजनदार रायफल बन जाता है वहीं नागार्जुन का शिशु 'हरिजन' अथवा दलित जन की

मुक्ति के कारक के रूप में कविता में आद्योपान्त उपस्थिति बनाए रखता है, और शोषक समाज के खिलाफ एक मुक्तिकामी शक्ति के रूप में आकार लेता है। क्रमशः दोनों ही कविताओं का सन्दर्भ ले सकते हैं-

*वह शिशु*
*चला गया जाने कहाँ,*
*और अब उसके ही स्थान पर*
*मात्र हैं सूरज-मुखी-फूल-गुच्छे*
.....
*मैं बढ़ रहा हूँ*
*कन्धों पर फूलों के लंबे वे गुच्छे*
*क्या हुए, कहाँ गए?*
*कंधे क्यों वजन से दुःख रहे सहसा।*
*ओ हो*
*बन्दूक आ गई*
*वाह वा...!!*
*वजनदार रायफल,*
*भई खूब!!* (मुक्तिबोध, *चाँद का मुँह टेढ़ा है और अँधेरे में,* पृष्ठ 30-31)

नागार्जुन की *हरिजन गाथा* में इस क्रान्तिचेता शिशु का वर्णन कुछ इस तरह हैं-

*'श्याम सलोना यह अछूत शिशु*
*हम सब का उद्धार करेगा*
*आज यह सम्पूर्ण क्रान्ति का*
*बेड़ा सचमुच पार करेगा*
*हिंसा और अहिंसा दोनों*
*बहने इसको प्यार करेंगी*
*इसके आगे आपस में वे*
*कभी नहीं तकरार करेंगी...'* (www.kavitakosh.org नागार्जुन, *हरिजन गाथा*)

दोनों ही कविताओं में गाँधी और अहिंसा का सन्दर्भ लिया गया है। जहाँ मुक्तिबोध *अन्धेरे में* वजनदार रायफल के रूप में चित्रित शिशु के द्वारा क्रान्ति का आह्वान करते हैं वहीं नागार्जुन के यहाँ यह शिशु, 'सम्पूर्ण क्रान्ति' तथा हिंसा और अहिंसा के संयोजक के रूप में विकसित होता है।

इसी तरह से नागार्जुन की *मैला आँचल, सद्गति, आए दिन बहार के* जैसी कविताएँ हैं जिनका सन्दर्भ विषय के तौर पर हिन्दी साहित्य के लिए नया नहीं है। बावजूद इसके नागार्जुन के यहाँ इनको नयी भंगिमाओं के साथ देखा-पढ़ा जा सकता है। *आए दिन बहार के* कविता का सन्दर्भ यहाँ लिया जा सकता है-

*'स्वेत-स्याम-रतनार' अँखियाँ निहार के*

*सिंडकेटी प्रभुओं की पग धूर झार के*
*लौटे हैं दिल्ली से कल टिकट मार के*
*खिले हैं दांत ज्यों दाने अनार के*
*आए दिन बहार के!* (*नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ,* पृष्ठ 104)

इस कविता में नागार्जुन एक पारम्परिक रूमानी सन्दर्भ *आए दिन बहार के* - को अपनी व्यंगात्मक शैली से तत्कालीन राजनीति के काले सच से इस प्रकार जोड़ते हैं कि यह कहीं से भी असंगत नहीं लगता। इस बिन्दु को नागार्जुन की महत्त्वपूर्ण विशेषता के तौर पर देखा जाना चाहिए।

नागार्जुन ने जहाँ एक तरफ लू-शुन, बर्तोल्त ब्रेख्त, लेनिन और भगत सिंह जैसी साहित्यिक-राजनीतिक शख्सियतों पर कविताएँ लिखीं हैं, वहीं अहल्या, शूर्पनखा, शकुन्तला और रोहिणी जैसे मिथकीय चरित्रों पर भी उतने ही अधिकार भाव से कविताएँ लिखी हैं। प्रकृति के विविध रूपों पर कविताएँ लिखी हैं तो 'साम्राज्यवाद', 'सामन्तवाद' और 'पूँजीवाद' जैसी शोषणकारी व्यवस्था के विरोध में तमाम कविताएँ लिखीं हैं। इस दृष्टि से देखें तो नागार्जुन की कविताओं का फलक बहुत विस्तृत है।

### 3.2. भाषा के स्तर पर

नागार्जुन की भाषा, जीवन की संवेदना से उपजी भाषा है और यही कारण है कि उनकी भाषा कहीं से भी उनकी कविता पर आरोपित नहीं जान पड़ती। उनकी कविता में जीवन ने जब जैसी भंगिमा अख्तियार की है; भाषा, सहचरी बनकर उसके साथ चली है। 'संरचनावाद' और 'उत्तर-संरचनावाद' जैसे तमाम साहित्य आन्दोलनों द्वारा भाषा को कविता के केन्द्र में प्रतिष्ठित करने की बहसों के बीच जब नागार्जुन कविता की भाषा को कथ्य की अनुगामिनी बनाते हैं, तो यह अनायास नहीं है। दरअसल खाँटी कलावाद उनका लक्ष्य कभी नहीं रहा, इसलिए जनता के लिए लिखी गई कविता को नागार्जुन जनता की भाषा में रचते हैं। उनके लिए कहना महत्वपूर्ण है। लिहाज़ा गढ़न के औजार के रूप में भाषा का लोकरंजक रूप उनकी कविताओं की विशेषता है। क्योंकि नागार्जुन जनकवि हैं। अतः उनकी भाषा जनता के बीच से ही उपजती है।

गिरधर राठी नागार्जुन की भाषा पर लिखते हैं, "कविता भाषा में बसती है। किसी भी भाषा की कविता हो, वह उस भाषा के रचना संसार, उसके ध्वनि सौन्दर्य और नाद सौन्दर्य आदि को प्रतिबिम्बित करती है। इस दृष्टि से अगर आप वैद्यनाथ मिश्र यात्री यानी बाबा नागार्जुन की कविता को देखें तो आप पाएँगे कि उनकी कविता भाषा के साथ बहुत खिलवाड़ करती है। भाषा पर उनका असाधारण अधिकार था। घनघोर संस्कृतनिष्ठ पदावली से लेकर निहायत बोलचाल की और जगह-जगह की हिन्दी आप उनकी कविता में पा सकते हैं। फिर वह हिन्दी बंगाल की भी हो सकती है, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश, मिथिलांचल या पंजाब की भी।" (http://www.bbc.com/hindi/india/2011/03/110202_spl_baba_rathi_vv.shtml) ज़ाहिर है बाबा नागार्जुन के घुमन्तू व्यक्तित्व का उनके काव्य-वस्तु अथवा कथ्य पर जिस तरह का प्रभाव रहा है, वह प्रभाव भाषा पर भी कमोबेश वैसा ही लक्षित किया जा सकता है। लेकिन ऐसा नहीं है कि नागार्जुन की काव्य-भाषा पर केवल उनके घुमन्तू व्यक्तित्व का ही प्रभाव रहा हो। चूँकि उनकी चेतना के निर्माण में छायावाद, प्रगतिवाद, तत्कालीन स्वतन्त्रता आन्दोलन, यथार्थवाद, संस्कृत और मैथिली साहित्य के अध्ययन, उनकी वामपन्थी वैचारिकता, उनके ग्रामीण परिवेश जैसे अनगिनत कारकों का प्रभाव रहा है अतः उनकी भाषा पर भी इसका प्रभाव पड़ा है। मैनेजर पाण्डेय नागार्जुन की काव्य-भाषा पर लिखते हैं, "नागार्जुन की कविताओं में काव्य-भाषा के भी अनेक रूप हैं। एक रूप वह है जो *कालिदास सच-सच बतलाना* में दिखाई पड़ता है। तो दूसरा रूप सामाजिक ज़िन्दगी की समस्याओं से जुड़ी हुई कविताओं में दीख पड़ता है, जैसे *मन करता है, प्रेत का बयान,* या *अकाल और उसके बाद*। उनकी काव्य-भाषा

का तीसरा रूप राजनीतिक व्यंग्य की कविताओं में है और चौथा रूप आन्दोलनधर्मी कविताओं में। यहाँ कविता की भाषा अखबार की तरह तात्कालिकता को छूती नज़र आती है। उनकी काव्य भाषा का एक और रूप उनके गीतों में है, जहाँ वे विद्यापति की स्मृति जगाते हैं।" (*कल के लिए*, अक्टूबर-दिसंबर 1995, पृष्ठ 27) मैनेजर पाण्डेय के इस वर्गीकरण से नागार्जुन की काव्य- भाषा की विविधता का सहज ही अन्दाज़ा लगाया जा सकता है। कुछ कविताओं के उदाहरण से यह और भी स्पष्ट हो पाएगा-

*ख़ड-ख़ड़-ख़ड-ख़ड़, हड़–हड़–हड़–हड़*
*काँपा कुछ हाड़ों का मानवीय ढाँचा*
*मचाकर लम्बी चमचों-सा पँचगुरा हाथ*
*रूखी पतली किट-किट आवाज़ में*
*प्रेत ने जवाब दिया-*
*"महाराज!*
*नागरिक हैं हम स्वाधीन भारत के...*
*पूर्णिया जिला है, सूबा बिहार के सीवान पर*
*थाना धमदाहा, बस्ती रुपउली*
*जाति का कायथ* (*प्रेत का बयान, नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ,* पृष्ठ 94-95)

अधोलिखित कविता में राजनीतिक व्यंग्य में भाषा की गढ़न देखने लायक है -

*आओ रानी हम ढोएँगे पालकी*
*यही हुई है राय जवाहर लाल की*
*रफू करेंगे फटे-पुराने जाल की*
*यही हुई है राय जवाहरलाल की*
*आओ रानी हम ढोएँगे पालकी!*
*आओ रानी, हम ढोएँगे पालकी*

*(नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ, पृष्ठ 94-95)*

भाषा की आन्दोलनधर्मी भंगिमा 'प्रतिबद्ध हूँ' कविता में देखी जा सकती है-

संबद्ध हूँ, जी हाँ संबद्ध हूँ-
सचर-अचर दृष्टि से...
शीत से, ताप से, धूप से, ओस से, हिमपात से...
राग से, द्वेष से, क्रोध से, घृणा से, हर्ष से, शोक से, उमंग से, आक्रोश से...
निश्चय-अनिश्चय से, संशय, भ्रम से, क्रम से, व्यतिक्रम से...

(प्रतिबद्ध हूँ, नागार्जुन प्रतिनिधि कविताएँ, पृष्ठ 15)

नागार्जुन की काव्य-भाषा, नएसौन्दर्य-बोध के मानकों को सिरज रही है। स्पष्ट है कि नागार्जुन में भाषा की यह विशिष्टता अनायास नहीं आई है। यह उनका सचेत कवि मानस है, जो तय कर रहा है कि उनकी भाषा जनता के बीच से उपजेगी।

यहीं पर नागार्जुन की काव्य-भाषा की जनपक्षधरता भी तय होती जाती है। *हरिजन गाथा* कविता की कुछ और पंक्तियों का सन्दर्भ ले सकते हैं-

*ऐसा तो कभी नहीं हुआ था कि*
*हरिजन-माताएँ अपने भ्रूणों के जनकों को*
*खो चुकी हों एक पैशाचिक दुष्काण्ड में*
*ऐसा तो कभी नहीं हुआ था...*
*ऐसा तो कभी नहीं हुआ था कि*
*एक नहीं, दो नहीं तीन नहीं—*
*तेरह अभागे—*
*अकिंचन मनुपुत्र*
*ज़िन्दा झोंक दिए गए हों*
*प्रचण्ड अग्नि की विकराल लपटों में*
*साधन सम्पन्न ऊँची जातियों वाले*
*सौ-सौ मनुपुत्रों द्वारा!*
*ऐसा तो कभी नहीं हुआ था...*

नागार्जुन, परम्परा के प्रतिमानों के साथ रची इस कविता में जिस नई दृष्टि या 'नए सौन्दर्य-बोध' को सिरज रहे हैं वह भाषा के सचेत प्रयोग के बिना असम्भव थी। अतः नागार्जुन पर लगने वाले यह आरोप कि वे भाषा व शिल्प के प्रति उदासीन हैं, सही प्रतीत नहीं होते। यह सम्भव है कि भाषा के जिस सौन्दर्य की अपेक्षा विशुद्ध कलावादी आलोचना करती है; वह नागार्जुन की कवि-चेतना के मानकों पर खरी नहीं उतरती। लिहाज़ा उनकी कविताओं में भाषा का रूप वह होता है जिसे उस कविता की अन्तर्वस्तु और नागार्जुन की चेतना ठीक समझती है।

नागार्जुन पर अक्सर यह आरोप लगाया जाता रहा है कि अपनी कविताओं में वे छन्द और शिल्प के प्रति उदासीन हैं। लेकिन उनकी कविताई की विशिष्टता को जानने-समझने वाले लोग यह जानते हैं कि अपनी कविता की ज़रूरत के हिसाब से नागार्जुन ने परम्परागत छन्दबद्ध कविताएँ भी लिखी हैं। 'शासन की बन्दूक' कविता का उदाहरण ले सकते हैं, जहाँ नागार्जुन ने दोहा छन्द का बेहतरीन इस्तेमाल किया है।

*'खड़ी हो गई चाँपकर कंकालों की हूक*
*नभ में विपुल विराट सी शासन की बन्दूक*
*जली ठूंठ पर बैठकर गई कोकिला कूक*
*बाल न बाँका कर सकी शासन की बन्दूक'*

नागार्जुन अपनी भाषा के व्यंग्यात्मक तेवर के लिए भी जाने जाते हैं। "सामाजिक-आर्थिक विषमता का चित्रण करने से रचना में व्यंग्य आ जाना स्वाभाविक है। व्यंग्य ऊपर-ऊपर हास्य लगता है, किन्तु वह अन्ततः करुणा उत्पन्न करता है। इसीलिये सामाजिक व्यंग्य अमानवीय-शोषण सत्ता का सदैव विरोध करता है। प्रगतिशील कवियों में व्यंग्य तो सबके यहाँ मिल जाएगा, किन्तु नागार्जुन इस क्षेत्र में सबसे आगे हैं।" (विश्वनाथ त्रिपाठी, *हिन्दी साहित्य का सरल इतिहास*, ओरिएँटल ब्लैक्स्वान, पृष्ठ 137)

तत्कालीन राजनीति पर लिखी उनकी अनगिनत कविताएँ उनकी व्यंग्यात्मक शैली के कारण बेहद लोकप्रिय हैं। *आए दिन बहार के* कविता का उदाहरण ले सकते हैं –

*'सपने दिखे कार के*
*गगन-बिहार के*
*सीखेंगे नखरे, समुन्दर-पार के*
*लौटे टिकट मार के*
*आए दिन बहार के!' (नागार्जुन, प्रतिनिधि कविताएँ, पृष्ठ 104)*

उपर्युक्त कविता में नागार्जुन की व्यंग्यात्मक शैली के अलावा एक महत्त्वपूर्ण विशेषता इस कविता की भाषा में लोक-प्रचलित शब्दों का प्रयोग है। 'टिकट मार के' जैसी शब्दावली उसी 'लोक' से आती है, जिसके प्रति नागार्जुन 'प्रतिबद्ध हैं'। भाषा का लोकवादी रूप नागार्जुन की कविता का एक महत्वपूर्ण बिन्दु कहा जा सकता है। और नागार्जुन की कविता की सम्प्रेषणीयता में भाषा के इस लोकवादी रूप की महत्वपूर्ण भूमिका मानी जानी चाहिए। लेकिन इस सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि नागार्जुन के कविता की भाषा अपने अन्तर्वस्तु के लिहाज से परिवर्तित हो जाती है। कहा जा सकता है कि उनकी भाषा में भी परम्परा और प्रयोग का बेहतरीन सामंजस्य दिखता है। नई शब्दावलियों को गढ़ना उनको प्रिय है, 'मैला आँचल' कविता का उदाहरण ले सकते हैं –

*'पंक-पृथुल कर-चरण हुए चन्दन अनुलेपित*
*सबकी छवियाँ अंकित, सबके स्वर हैं टेपित'*

यहाँ पंक-पृथुल कर-चरण जैसी संस्कृतनिष्ठ हिन्दी की शब्दावलियों के साथ 'टेपित' शब्द का प्रयोग नागार्जुन के ही काव्य-संसार में सम्भव है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नागार्जुन की कविता, उनकी भाषा की विविध भंगिमाओं और रूपों के कारण अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त कर पाती है।

## 4. निष्कर्ष

नागार्जुन ने आधुनिक कविता जगत में नए मुहावरे गढ़े हैं। उनकी कविताएँ अपने समय की कलात्मकता को नए सिरे से परिभाषित करती हैं। अपनी सम्पूर्णता में ये कविताएँ एक तरफ साहित्य के समाजशास्त्रीय रूप को प्रतिबिम्बित करती हैं,तो दूसरी तरफ अपने समय का ऐतिहासिक आख्यान होने का माद्दा भी रखती हैं। एक साथ इतने बड़े फलक को साधना नागार्जुन जैसे रचनाकार द्वारा ही सम्भव है। उनकी भाषा का लोकरंजक रूप जहाँ कविता को 'जन' के जीवन से जोड़ता है वहीं उसका व्यंग्यात्मक तेवर तत्कालीन राजनीति के लिए प्रतिपक्ष का स्वर बन जाता है। उनके यहाँ सामाजिक यथार्थ से लेकर प्रकृति तक कविता में एक विशेष भंगिमा के साथ आते हैं। यह भंगिमा नागार्जुन के विद्रोही तेवर और तमाम लोकरंजक तत्वों तथा यथार्थवादी रुझानों से मिलकर बनी है, लिहाज़ा उनकी कविता का कोई भी पक्ष इससे अछूता नहीं रह पाता। अपनी सम्पूर्णता में नागार्जुन की कविताएँ आम जनता के लिए उनकी प्रतिबद्धता के स्वर के साथ आती हैं और यह प्रतिबद्धता ही नागार्जुन को विशिष्ट बनाती है।